



2024:CGHC:44843

प्रकाशनार्थ अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर
रिट याचिका (सेवा) क्रमांक 6244/2014

1- जमील अहमद, पिता स्व. श्री अब्दुल सत्तार, आयु लगभग 56 वर्ष, व्यवसाय- सहायक ग्रेड-3, कार्यालय जोन क्रमांक 01, नगर पालिक निगम, पानी टंकी परिसर, खमतराई, जिला- रायपुर, निवासी- ईरानी डेरा के पास, सिटी स्टेशन पंडरी, रायपुर (छत्तीसगढ़)

--- याचिकाकर्ता

विरुद्ध

1- छत्तीसगढ़ राज्य, द्वारा: सचिव, नगरीय प्रशासन एवं विकास विभाग, मंत्रालय, महानदी भवन, नया रायपुर, छत्तीसगढ़।

2- आयुक्त, नगर पालिक निगम रायपुर, जिला- रायपुर, छत्तीसगढ़

3- अपील समिति, नगर पालिक निगम रायपुर, छत्तीसगढ़

---उत्तरवादीगण

(वाद-शीर्षक वाद सूचना प्रणाली से लिया गया है)

याचिकाकर्ता की ओर से

:- श्री राघवेन्द्र प्रधान, अधिवक्ता

राज्य/उत्तरवादी क्रमांक 1 की ओर से

:- श्री पंकज सिंह, पैनल अधिवक्ता

उत्तरवादी क्रमांक 2 एवं 3 की ओर से

:- श्री एच.बी. अग्रवाल, वरिष्ठ अधिवक्ता,

साथ में श्री अक्षत अग्रवाल, अधिवक्ता

एकल पीठ - माननीय न्यायमूर्ति श्री संजय के. अग्रवाल

बोर्ड पर आदेश

18.11.2024

1. यह रिट याचिका आयुक्त, नगर पालिक निगम रायपुर/उत्तरवादी क्रमांक 2 द्वारा दिनांक 20.07.2009 को पारित आदेश (अनुलग्नक पी/1) के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता पर संचयी प्रभाव से चार वार्षिक वेतन वृद्धियाँ रोकने की शास्ति अधिरोपित की गई है। साथ ही, इस याचिका में दिनांक 14.07.2014 के आदेश (अनुलग्नक पी/10) को भी चुनौती दी गई है, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता के अभ्यावेदन को खारिज कर दिया गया है, यद्यपि अपील समिति/उत्तरवादी



क्रमांक 3 द्वारा दिनांक 13.01.2012 को पारित आदेश (अनुलग्नक पी/6) के माध्यम से उसकी अपील स्वीकार कर ली गई थी।

2. उपरोक्त चुनौती निम्नलिखित तथ्यात्मक पृष्ठभूमि के आधार पर दी गई है :-

2.1. वर्ष 2002 में, जब याचिकाकर्ता स्थापना शाखा में सहायक ग्रेड-III के रूप में कार्यरत था, तब नगर पालिक निगम रायपुर में नियमों के विरुद्ध कुमारी मंगला बाई की अनुकंपा आधार पर नियुक्ति की गई थी, जिसके विरुद्ध प्रारंभिक जाँच प्रस्तावित की गई और तत्कालीन उपायुक्त श्री लोकेश्वर साहू को जाँच अधिकारी नियुक्त किया गया। उपायुक्त ने दिनांक 17.03.2008 को अपनी प्रारंभिक जाँच रिपोर्ट (अनुलग्नक पी/3) प्रस्तुत की और इसमें याचिकाकर्ता को प्रथम दृष्टया दोषी पाया गया, जिसके फलस्वरूप दिनांक 02.07.2008 को आरोप-पत्र तामील कर याचिकाकर्ता के विरुद्ध विभागीय जाँच संस्थित एवं प्रारंभ की गई (अनुलग्नक पी/4)। तत्पश्चात, विभागीय जाँच संचालित करने और जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए कार्यपालन अभियंता श्री के.के. सिंह को जाँच अधिकारी नियुक्त किया गया। यद्यपि, नगर पालिक निगम रायपुर द्वारा प्रस्तुत शपथ पत्र के पृष्ठ क्रमांक 17 पर उपलब्ध आदेश पत्र दिनांक 16.07.2009 के अनुसार, कार्यपालन अभियंता श्री के.के. सिंह द्वारा कोई रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं की गई थी और इसलिए मामला आयुक्त के समक्ष रखा गया। इसके बाद आयुक्त, नगर पालिक निगम रायपुर ने यह अभिनिर्धारित किया कि चूँकि कार्यपालन अभियंता श्री के.के. सिंह, जिन्हें विभागीय जाँच के लिए जाँच अधिकारी नियुक्त किया गया था, वे प्रारंभिक जाँच करने वाले उपायुक्त श्री लोकेश्वर साहू से कनिष्ठ हैं, अतः श्री के.के. सिंह उपायुक्त द्वारा जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के बाद जाँच की कार्यवाही आगे नहीं बढ़ा सकते; और तदनुसार उपायुक्त द्वारा प्रस्तुत प्रारंभिक जाँच रिपोर्ट दिनांक 17.03.2008 (अनुलग्नक पी/3) के अनुसार ही आगे बढ़ने का निर्देश दिया। तदनुसार, आदेश दिनांक 20.07.2009 (अनुलग्नक पी/1) के माध्यम से याचिकाकर्ता पर संचयी प्रभाव से चार वार्षिक वेतन वृद्धियाँ रोकने की शास्ति अधिरोपित की गई।

2.2 तत्पश्चात, याचिकाकर्ता ने आक्षेपित आदेश दिनांक 20.07.2009 के विरुद्ध अपील समिति के समक्ष एक अपील प्रस्तुत की, जिसे आदेश दिनांक 13.01.2012 (अनुलग्नक पी/6) के माध्यम से स्वीकार कर लिया गया। हालाँकि, अपील समिति द्वारा पारित आदेश दिनांक 13.01.2012 का नगर पालिक निगम, रायपुर द्वारा आदर/अनुपालन नहीं किया गया, जिसके कारण याचिकाकर्ता द्वारा इस न्यायालय के समक्ष रिट याचिका सेवा क्रमांक 1501/2014 प्रस्तुत की गई। इस न्यायालय ने आदेश दिनांक 24.03.2014 (अनुलग्नक पी/8) के द्वारा उत्तरवादी प्राधिकारियों को याचिकाकर्ता के अभ्यावेदन पर विचार करने का निर्देश दिया। परिणामस्वरूप, याचिकाकर्ता ने उत्तरवादी प्राधिकारियों के समक्ष एक अभ्यावेदन प्रस्तुत किया, जिसे अंततः आयुक्त, नगर पालिक निगम, रायपुर द्वारा आदेश दिनांक 14.07.2014 (अनुलग्नक पी/10) के माध्यम से खारिज कर दिया गया। इसी के फलस्वरूप,



याचिकाकर्ता द्वारा यह वर्तमान रिट याचिका दायर की गई है, जिसमें आदेश दिनांक 20.07.2009 (अनुलग्नक पी/1) और आदेश दिनांक 14.07.2014 (अनुलग्नक पी/10) दोनों को चुनौती दी गई है।

3. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राघवेन्द्र प्रधान ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि संचयी प्रभाव से चार वार्षिक वेतन वृद्धियाँ रोकने की शास्ति अधिरोपित करना, छत्तीसगढ़ सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 1966 (एतस्मिन् पश्चात् जिसे 'नियम, 1966' के रूप में संदर्भित किया जाएगा) के नियम 10 (v) के अधीन एक मुख्य शास्ति है और इसे नियम, 1966 के नियम 14 के उप-नियम (3) से (23) में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार नियमित विभागीय कार्यवाही संचालित किए बिना नहीं किया जा सकता है। अतः, आक्षेपित आदेश दिनांक 20.07.2009 एवं 14.07.2014 अभिखण्डित किए जाने योग्य हैं।

4. उत्तरवादी क्रमांक 2 एवं 3 की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री एच.बी. अग्रवाल ने आक्षेपित आदेश का समर्थन किया।

5. मैंने पक्षकारण के विद्वान अधिवक्तागण को सुना है, उनके द्वारा उपरोक्त प्रस्तुत परस्पर विरोधी तर्कों पर विचार किया है और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों का अत्यंत सूक्ष्मतापूर्वक परिशीलन किया है।

6. यह निर्विवाद है कि प्रारंभिक जाँच तत्कालीन उपायुक्त श्री लोकेश्वर साहू द्वारा संचालित की गई थी और उन्होंने 17.03.2008 को अपनी प्रारंभिक जाँच रिपोर्ट (अनुलग्नक पी/3) प्रस्तुत की थी, जिसमें याचिकाकर्ता को नियमों के विरुद्ध कुमारी मंगला बाई की अनुकंपा आधार पर नियुक्ति के लिए प्रथम दृष्टया दोषी पाया गया था और उसे 02.07.2008 को आरोप-पत्र (अनुलग्नक पी/4) दिया गया था। तत्पश्चात्, याचिकाकर्ता के विरुद्ध विभागीय कार्यवाही संस्थित की गई और दिनांक 31.07.2008 को कार्यपालन अभियंता श्री के.के. सिंह को जाँच अधिकारी नियुक्त किया गया। बाद में, फाइल आयुक्त के समक्ष रखी गई, जिन्होंने यह अभिनिर्धारित किया कि चूँकि याचिकाकर्ता के विरुद्ध विभागीय जाँच संचालित करने के लिए नियुक्त जाँच अधिकारी श्री के.के. सिंह कार्यपालन अभियंता, प्रारंभिक जाँच करने वाले उपायुक्त श्री लोकेश्वर साहू से कनिष्ठ हैं, इसलिए उपायुक्त द्वारा जाँच किए जाने के बाद कार्यपालन अभियंता द्वारा पुनः कोई जाँच नहीं की जा सकती। तदनुसार, आयुक्त द्वारा यह निर्देशित किया गया कि उपायुक्त द्वारा प्रस्तुत प्रारंभिक जाँच रिपोर्ट दिनांक 17.03.2008 (अनुलग्नक पी/3) के अनुसार उचित कार्यवाही की जाए। तदनुसार, आयुक्त नगर पालिक निगम रायपुर द्वारा नियम, 1966 के नियम 14 के अधीन निर्धारित किसी भी विभागीय जाँच का संचालन किए बिना, आदेश दिनांक 20.07.2009 (अनुलग्नक पी/1) पारित कर संचयी प्रभाव से चार वार्षिक वेतन वृद्धियाँ रोकने की शास्ति अधिरोपित कर दी गई। इसके अतिरिक्त, यद्यपि याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत अपील को अपील समिति ने आदेश दिनांक 13.01.2012 (अनुलग्नक पी/6) द्वारा स्वीकार कर लिया था, किंतु नगर निगम द्वारा उसका अनुपालन नहीं किया गया और इस न्यायालय द्वारा रिट याचिका सेवा क्रमांक 1501/2014 में दिनांक 24.03.2014 को पारित आदेश के अनुसरण में याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत



अभ्यावेदन को अंततः उत्तरवादी प्राधिकारी द्वारा खारिज कर दिया गया, जिसके कारण वर्तमान रिट याचिका प्रस्तुत की गई है।

7. इस स्तर पर, नियम, 1966 के नियम 10(iv) और नियम 10(v) पर विचार करना उचित होगा, जो निम्नानुसार हैं :-

“10. शास्तियाँ- शासकीय सेवक पर, निम्नलिखित शास्तियाँ, अच्छे तथा पर्याप्त कारणों से तथा इसमें इसके पश्चात् उपबन्धित किये गये अनुसार, अधिरोपित की जा सकेंगी, अर्थात् :-

लघु शास्तियाँ-

(i) xxx.....xxx.....xxx

(ii) xxx.....xxx.....xxx

(iii) xxx.....xxx.....xxx

(iv) वेतन की वृद्धियों का या गतिरोध भत्ते का रोका जाना ।

मुख्य शास्तियाँ-

(v) किसी उल्लिखित कालावधि के लिये अवनत करके वेतन के समय-मान के निम्नतर प्रक्रम में, ऐसे और निदेशों के साथ लाया जाना कि क्या शासकीय सेवक ऐसी अवनति की कालावधि के दौरान यथास्थिति वेतन-वृद्धियाँ या गतिरोध भत्ता उपार्जित करेगा या नहीं और क्या ऐसी कालावधि के समाप्त हो जाने पर ऐसी अवनति उसके वेतन की भावी वृद्धियों को या गतिरोध भत्ते के स्थगित करने का प्रभाव रखेगी या नहीं;

टिप्पणी- अभिव्यक्ति "अवनत करके वेतन के समयमान के निम्नतर प्रक्रम में लाया जाना" के अन्तर्गत शासकीय सेवक को गतिरोध-भत्ता मिलने पर जिस प्रक्रम पर वेतन प्राप्त होता है, उस प्रक्रम से निम्न प्रक्रम पर अवनत करना भी आता है।"

8. नियम 10(iv) के सावधानीपूर्वक अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि वेतन की वृद्धियों का या गतिरोध भत्ते का रोका जाना लघु शास्ति है; जबकि नियम 1966 के नियम 10(v) के अधीन किसी उल्लिखित कालावधि के लिये अवनत करके वेतन के समय-मान के निम्नतर प्रक्रम में, ऐसे और निदेशों के साथ लाया जाना, मुख्य शास्ति की श्रेणी में आता है।

9. यह विवाद्यक माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष कुलवंत सिंह गिल विरुद्ध पंजाब राज्य¹ {तीन न्यायाधीशों की पीठ} के प्रकरण में आया था, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि संचयी प्रभाव से दो वेतन वृद्धियाँ रोकना पंजाब सिविल सेवा (दंड एवं अपील) नियम, 1970 के नियम 5(v)

1 1991 Supp (1) एससीC 504



के अधीन मुख्य शास्ति है। यह नियम छत्तीसगढ़ सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 1966 के नियम 10(v) के *समविषयक* है, और माननीय न्यायाधिपतिगण ने कण्डिका 4 में सुसंगत रूप से निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है :

“4. नियम 5(iv) के अर्थ के अंतर्गत साधारण रूप से वेतन वृद्धि रोकना निस्संदेह एक लघु शास्ति है। किंतु उप-नियम (v) किसी उल्लिखित कालावधि के लिये अवनत करके वेतन के समय-मान के निम्नतर प्रक्रम में ऐसे और निदेशों के साथ परिकल्पना करता है, कि क्या शासकीय सेवक ऐसी अवनति की अवधि के दौरान वेतन वृद्धि उपार्जित करेगा या नहीं, और क्या ऐसी अवधि की समाप्ति पर उक्त अवनति का प्रभाव उसकी भविष्य की वेतन वृद्धियों को स्थगित करने वाला होगा या नहीं। यह शास्ति का एक स्वतंत्र शीर्ष है और इसे उपयुक्त प्रकरणों में दंड के रूप में अधिरोपित किया जा सकता है। यह मुख्य शास्तियों में से एक है। क्या संचयी प्रभाव से दो वेतन वृद्धियाँ रोकने का आक्षेपित आदेश नियम 5(v) के अर्थ के अंतर्गत आएगा? यदि ऐसा है, तो नियमों के नियम 8 और 9 के अधीन नियमित जाँच करना आवश्यक है। राज्य की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री नैयर का तर्क है कि संचयी प्रभाव से दो वेतन वृद्धियाँ रोकना केवल एक लघु शास्ति है क्योंकि यह समय-मान के निम्नतर प्रक्रम पर अवनति के कोटि में नहीं आता है। हमें इस तर्क को स्वीकार करने में अत्यंत कठिनाई हो रही है। बिना किसी शर्त या प्रतिबंध के साधारण रूप से वेतन वृद्धि रोकना निश्चित रूप से नियमों के नियम 5(iv) के अर्थ में आता है। किंतु जब दो वेतन वृद्धियों को रोकने की शास्ति, अर्थात् दो वर्षों के लिए संचयी प्रभाव के साथ अधिरोपित की जाती है, तो इसका निर्विवाद रूप से अर्थ यह है कि कर्मचारी द्वारा अर्जित दो वेतन वृद्धियाँ, उच्च समय-मान अर्जित करने की उसकी प्रगति में दंड के रूप में हमेशा के लिए काट दी गई हैं। दूसरे शब्दों में, घड़ी को समय-मान के निम्नतर प्रक्रम पर पीछे कर दिया गया है और दो साल बीतने के बाद वह घड़ी उसी स्तर से नए सिरे से चलना शुरू होती है। आक्षेपित आदेश का अंतर्निहित प्रभाव यह है कि अपीलार्थी कर्मचारी को उसके समय-मान में दो चरण नीचे कर दिया गया है और यह स्थिति उसकी शेष सेवा अवधि तक स्थायी रूप से लागू रहेगी, साथ ही यह निर्देश भी निहित है कि दंड के रूप में उसकी दो वर्ष की वेतन वृद्धियों को समय-मान में नहीं गिना जाएगा। शब्द भाषा की त्वचा की तरह होते हैं, जिसे यदि उतार दिया जाए तो उसका असली रंग या परिणामी प्रभाव स्पष्ट हो जाता है। जब हम इस





दृष्टिकोण से समस्या पर विचार करते हैं, तो इसका प्रभाव वही होता है जैसा कि नियमों के नियम 5(v) के अधीन परिकल्पित है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि 'सरवन सिंह विरुद्ध पंजाब राज्य एवं अन्य' [आई.एल.आर. (1985) 2 पी&एच 193] में युगलपीठ की ओर से व्यक्त करते हुए पी.सी. जैन, कार्यवाहक मुख्य न्यायाधीश ने समान प्रश्न पर विचार करते हुए कण्डिका 8 में यह अभिनिर्धारित किया था कि संचयी प्रभाव से वेतन वृद्धि रोकना किसी भी कल्पना से नियम 5 के खंड (v) या पंजाब सिविल सेवा नियमों के नियम 4.12 के अंतर्गत नहीं आता है। उसमें आगे यह अभिनिर्धारित किया गया था कि नियम 5 के खंड (v) के अधीन सक्षम प्राधिकारी द्वारा दंड के रूप में समय-मान के निम्नतर प्रक्रम पर अवनति की जानी चाहिए और वह अवधि बताई जानी चाहिए जिसके लिए ऐसी अवनति प्रभावी होगी, तथा बहाली पर यह भी विनिर्दिष्ट किया जाना चाहिए कि क्या अवनति उसकी भविष्य की वेतन वृद्धियों को स्थगित करने के लिए प्रभावी होगी। ऐसे प्रकरणों में बिना संचयी प्रभाव के वेतन वृद्धि रोकने का प्रश्न ही नहीं उठता। जिन प्रकरणों में संचयी प्रभाव के साथ या बिना वेतन वृद्धि रोकी जाती है, वहां शासकीय सेवक को कभी भी समय-मान के निम्नतर प्रक्रम पर अवनत नहीं किया जाता है। तदनुसार, यह धारित किया गया था कि नियम 5 का खंड (iv) उस प्रकरण के तथ्यों पर लागू होता है। ससम्मान, हम उच्च न्यायालय के इस विचार से सहमत नहीं हैं। यदि शाब्दिक व्याख्या अपनाई जाए, तो विद्वान न्यायाधिपतिगण का निष्कर्ष सही हो सकता है किंतु यदि इसके प्रभाव को ध्यान में रखा जाए, जो कि सदैव रखा जाना चाहिए, तो निष्कर्ष वही होगा जिस पर हम पहुँचे हैं। यदि उच्च न्यायालय के तर्क को स्वीकार कर लिया जाए, तो यह अनुशासनिक प्राधिकारी को वेतन वृद्धि रोकने की आड़ में, बिना स्पष्ट रूप से कहे, भविष्य की वेतन वृद्धियों को स्थायी रूप से रोकने की शक्ति दे देगा। ऐसे असंगत परिणामों को अनुमति नहीं दी जा सकती। नियम 5(iv) अनुशासनिक प्राधिकारी को जाँच किए बिना और निर्धारित प्रक्रिया का पालन किए बिना संचयी प्रभाव से वेतन वृद्धि रोकने की शास्ति अधिरोपित करने का अधिकार नहीं देता है। अन्यथा, ऐसा आदेश अधिकारिता या विधि के प्राधिकार के बिना होगा, और स्वतः ही शून्य होगा। इस दृष्टिकोण से विचार करते हुए हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि आक्षेपित आदेश नियमों के नियम 5(v) के अर्थ के अंतर्गत आएगा; यह एक मुख्य शास्ति है और बिना





जाँच के इस प्रकार के आक्षेपित शास्ति को अधिरोपित करना स्वतः ही अवैध है।”

10. कुलवंत सिंह गिल (पूर्वोक्त) के प्रकरण में प्रतिपादित विधि के उपरोक्त सिद्धांतों का मोहिंदर सिंह विरुद्ध पंजाब राज्य व अन्य² तथा पंजाब स्टेट इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड विरुद्ध राज कुमार गोयल³ के प्रकरणों में अनुमोदन सहित अनुपालन किया गया है, जिनमें स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया गया है कि बिना संचयी प्रभाव के वेतन वृद्धि रोकना लघु शास्ति की परिधि में आता है, जिसमें उल्लिखित कालावधि के पश्चात वेतन वृद्धि जारी कर दी जाती है; जबकि संचयी प्रभाव के साथ वेतन वृद्धि रोकना एक मुख्य शास्ति है, क्योंकि इसमें वेतन वृद्धि स्थायी रूप से स्थगित हो जाती है।

11. इसके अतिरिक्त, माननीय उच्चतम न्यायालय ने निर्णयों की एक लंबी श्रृंखला में यह अभिनिर्धारित किया है कि ऐसी अनुशासनिक कार्यवाही में जहाँ दीर्घ शास्ति के आरोप प्रस्तावित हों साक्ष्य अभिलिखित करना अनिवार्य है। इस संबंध में रूप सिंह नेगी विरुद्ध पंजाब नेशनल बैंक व अन्य⁴ तथा निर्मला जे. झाला विरुद्ध गुजरात राज्य व एक अन्य⁵ के प्रकरणों का संदर्भ लिया जा सकता है।

12. निर्मला जे. झाला (पूर्वोक्त) के प्रकरण में माननीय न्यायाधिपतिगण द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रारंभिक जाँच में अभिलिखित साक्ष्यों का उपयोग नियमित जाँच के लिए नहीं किया जा सकता है, चूंकि अपचारी कर्मचारी उस प्रक्रिया में शामिल नहीं होता है और प्रारंभिक जाँच के दौरान परीक्षित व्यक्तियों से प्रति-परीक्षण करने का अवसर उसे प्रदान नहीं किया जाता है। इसका सुसंगत अंश निम्नानुसार है:-

“42. इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने *अमलेंदु घोष विरुद्ध नॉर्थ ईस्टर्न रेलवे* [एआईआर 1960 एससी 992] के प्रकरण में यह अभिनिर्धारित किया कि किसी विशेष कथित कदाचार के संबंध में प्रारंभिक जाँच करने का प्रयोजन केवल किसी विशिष्ट तथ्य का पता लगाना और प्रथम दृष्टया यह जानना होता है कि क्या कथित कदाचार किया गया है; और प्रारंभिक जाँच में अभिलिखित निष्कर्षों के आधार पर दंड का कोई आदेश पारित नहीं किया जा सकता है। इसका उपयोग केवल यह विचार करने के लिए किया जा सकता है कि क्या अपचारी कर्मचारी के विरुद्ध नियमित अनुशासनिक कार्यवाही संचालित की जानी आवश्यक है।”

“43. इसी प्रकार, *चंपकलाल चिमनलाल शाह विरुद्ध भारत संघ* [एआईआर 1964 एससी 1854] में इस न्यायालय की संविधान पीठ ने समान विचार

2 1995 Supp (4) SCC 433

3 (2014) 15 SCC 748

4 (2009) 2 SCC 570

5 (2013) 4 SCC 301



व्यक्त करते हुए अभिनिर्धारित किया कि प्रारंभिक जाँच को नियमित जाँच के साथ भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए। प्रारंभिक जाँच भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2) के प्रावधानों द्वारा शासित नहीं होती है। प्रारंभिक जाँच एकपक्षीय की जा सकती है, क्योंकि यह केवल शासन की संतुष्टि के लिए होती है, यद्यपि आमतौर पर निष्पक्षता के लिए ऐसी जाँच में भी शासकीय सेवक से स्पष्टीकरण मांगा जा सकता है। किंतु उस स्तर पर, उसे सुनवाई का कोई अधिकार नहीं होता है क्योंकि जाँच केवल शासन की इस संतुष्टि के लिए होती है कि क्या नियमित जाँच की जानी चाहिए। न्यायालय ने आगे निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया: (एआईआर पृ. 1862, कण्डिका 12)"

"12. ... इसलिए इन दो जाँचों के बीच कोई भ्रम नहीं होना चाहिए; और केवल तभी जब शासन अनुच्छेद 311 में वर्णित तीन प्रमुख दंडों में से कोई एक अधिरोपित करने के प्रयोजन से विभागीय जाँच संचालित करने के लिए आगे बढ़ती है, तब शासकीय सेवक उस अनुच्छेद के संरक्षण का हकदार होता है, उससे पहले नहीं।"

44. नारायण दत्तात्रेय रामतीर्थकर विरुद्ध महाराष्ट्र राज्य [(1997) 1 एससीसी 299: 1997 एससीसी(एल एंड एस) 152: एआईआर 1997 एससी 2148] के प्रकरण में इस न्यायालय ने उक्त विवाद्यक पर विचार किया और निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

"... प्रारंभिक जाँच का उस जाँच से कोई संबंध नहीं होता जो आरोप-पत्र जारी होने के पश्चात की जाती है। प्रारंभिक जाँच केवल यह पता लगाने के लिए होती है कि क्या अपचारी कर्मचारी के विरुद्ध अनुशासनिक जाँच प्रारंभ की जानी चाहिए या नहीं। एक बार जब नियमों के अधीन नियमित जाँच आयोजित की जाती है, तो प्रारंभिक जाँच अपना महत्व खो देती है; और प्रारंभिक जाँच विधि के अनुसार सख्ती से आयोजित की गई थी या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का अनुपालन करते हुए की गई थी या नहीं, इसका कोई परिणाम शेष नहीं रह जाता है।"

45. उपरोक्त के आलोक में, यह स्पष्ट है कि प्रारंभिक जाँच में अभिलिखित साक्ष्यों का उपयोग नियमित जाँच में नहीं किया जा सकता है, क्योंकि अपचारी कर्मचारी उसमें शामिल नहीं होता है और ऐसी जाँच में परीक्षित व्यक्तियों से प्रति-परीक्षण करने का अवसर उसे नहीं दिया जाता है। ऐसे साक्ष्यों का उपयोग करना प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होगा।"





(विशेष बल दिया गया)

13. वर्तमान प्रकरण के तथ्यों पर लौटते हुए, नियम 1966 के नियम 10(v) के अनुसार और कुलवंत सिंह गिल (पूर्वोक्त) के प्रकरण में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों, जिनका मोहिंदर सिंह (पूर्वोक्त) तथा राज कुमार गोयल (पूर्वोक्त) के प्रकरणों में अनुमोदन सहित अनुपालन किया गया है, एवं निर्मला जे. झाला (पूर्वोक्त) में पारित निर्णय के आलोक में, यह पूर्णतः स्पष्ट है कि चूँकि संचयी प्रभाव से चार वार्षिक वेतन वृद्धियाँ रोकने की शास्ति एक दीर्घ शास्ति है, अनुशासनिक प्राधिकारी याचिकाकर्ता पर ऐसी शास्ति अधिरोपित करने का कोई भी आदेश पारित करने से पूर्व, सीसीए नियम 1966 के नियम 14 के उप-नियम (3) से (23) में निर्धारित रीति से एक नियमित विभागीय जाँच संचालित करने के लिए बाध्य था; और प्रारंभिक जाँच रिपोर्ट के आधार पर याचिकाकर्ता पर कोई भी शास्ति, विशेषकर दीर्घ शास्ति, अधिरोपित नहीं की जा सकती थी। तदनुसार, दिनांक 20.07.2009 के आक्षेपित आदेश(अनुलग्नक पी/1) और दिनांक 14.07.2014(अनुलग्नक पी/10), दोनों को एतद्द्वारा अभिखण्डित किया जाता है।

14. अतः, यह रिट याचिका उपरोक्त दर्शित सीमा तक **स्वीकार** की जाती है। वाद व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं।

सही/-

(संजय के. अग्रवाल)

न्यायाधीश

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।